INDIAN STREAMS RESEARCH JOURNAL
ISSN NO : 2230-7850
IMPACT FACTOR : 5.1651 (UIF)
VOLUME - 12 | ISSUE - 7 | AUGUST - 2022

हरिशंकर परसाई के सामाजिक व्यंग्यों में यथार्थ दृष्टि का अध्ययन

नीता वर्मा[1] , डॉ. रामलला शर्मा[2]
[1]शोधार्थी, हिन्दी, अवधेश प्रताप सिंह विश्वविद्यालय, रीवा (म.प्र.)
[2]प्राध्यापक हिन्दी, संजय गांधी स्मृति शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, सीधी (म.प्र.)

सारांश –

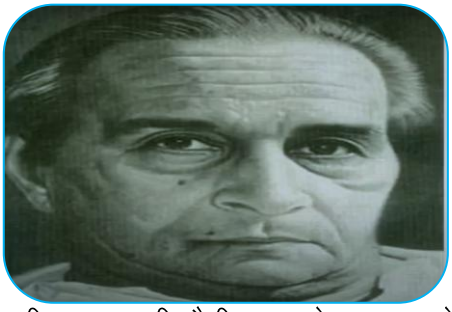

हरिशंकर परसाई ने समाज के दो वर्गों के प्रति संघर्ष किया एक तो जो शोषक वर्ग है दूसरा गरीब वर्ग जिसका शोषण होता है। गरीबों में चेतना शक्ति भरने के लिये आपने पूँजीपति वर्ग को खुलेआम अपने व्यंग्यों में बेनकाब किया है। परसाई जी ने व्यंग्य के माध्यम से मनुष्य को याद दिलाया है कि एक चूहा भी अपने अधिकारों के लिये सिर पर चढ़ जाता है, फिर तुम तो मनुष्य हो, तुम चाहो तो सब कुछ कर सकते हो। परसाई के ऐसे विचार ही उन्हें विशिष्ट स्थान दिलाते हैं। कोई भी सच्चा व्यंग्य लेखक सामाजिक संघर्ष के संदर्भों से कटकर नहीं रह सकता है, तो परसाई जी कैसे अछूते रहते। परसाई जी ने अपनी कलम की पैनी धार से समाज के नासूर को काटकर फेंकने का कार्य करते हैं।

मुख्य शब्द – समाज, संघर्ष, व्यंग्य एवं चेतना।

प्रस्तावना –

हरिशंकर परसाई व्यंग्य को सामाजिक हथियार के रूप में इस्तेमाल करते हैं। परसाई का लेखन विसंगतियों का उद्घाटन करते हैं। उनका साहित्य हर क्षेत्र में फैली बुराईयों के उन्मूलन का लक्ष्य लेकर चलता है। उनका साहित्य सामाजिकता के संदर्भ में एक प्रकाश पुंज है जो अज्ञानता, विसंगति, अन्याय रूपी अंधकार को दूर भगाता है। परसाइ का व्यापक दृष्टिकोण उन्हें दलित और शोषित वर्ग का अग्रदूत बना दिया है। उनका सम्पूर्ण साहित्य अपने समय का प्रमाणिक दस्तावेज है। वह बिना किसी शिकवा शिकायत के समाज की हकीकत को बचाया करते हैं। आजादी के बाद का भारतीय समाज परसाई के व्यंग्य का विषय है। यह समाज एक अनिश्चय की मन स्थिति में जी रहा है। 'तीसरे दर्जे के श्रद्धेय' शीर्षक में परसाई जी ने उद्घाटित किया है। वर्तमान समय में किसी पर विश्वास नहीं किया जा सकता। परसाई जी ने समाज की विद्रूपता को कहीं मूर्त तो कहीं अमूर्त रूप में प्रस्तुत किया है। आपके व्यंग्य भ्रष्ट समाज व्यवस्था को नकार कर, उसके स्थान पर मानवीय समाज की स्थापना करते हैं। परसाई तात्विक दृष्टि से एक विधि सर्वत्र अपनायी है। सामाजिक विसंगतियों और उनसे पैदा हुई समस्या ही परसाई के लेखक का मुख्य बिन्दु है।

हरिशंकर परसाई की रचना फेमिली प्लानिंग, गरीब तबके की विवशता को दिखाती है। हरिप्रसाद मास्टर के सातवें बच्चे के रूप में आने से एक जीव विधाता से इन्कार कर देता है। इस कथा में जीव और विधाता की चर्चा के दौरान परसाई जी ने अन्योक्ति से बड़ी सुन्दर अर्थ–योजना प्रस्तुत की है– ''भगवान जीव के कहते हैं कि वह मास्टर सतान चाहता है, इसका उत्तर जीव देता है, जीव बोला, वह क्या खाक संतान चाहेगा? संतान

तो उसकी मजबूरी है। वह तो बच्चो से तंग आ गया है, उन्हें मारता है गाली देता है और चिल्लाता है, अभागे मरते भी नहीं। पत्नी को पीटता है और बच्चे देखते हैं कि माँ–बाप को इसलिये पीट रहा है कि हम पैदा हो गए।''[1] इन बच्चों का न कोई भविष्य है, न कोई संस्कार है, न शिक्षा है न स्वास्थ है, न भोजन इस कथा के माध्यम से परसाई जी ने अबौद्धिक लोगों पर अपने व्यंग्य के द्वारा पिछड़े और रूढ़ संस्कार को त्याग देने पर जोर डालते हैं।

इस तरह हम देखते हैं कि समाज की कोई ऐसी समस्या या कमजोरी हरिशंकर परसाई की पारखी नजरों से बची नहीं है जिसको उन्होंने व्याख्यायित न किया हो। समाज में जहाँ भी विद्रूपता, विसंगति, अत्याचार, भ्रष्टाचार रूपी दलदल है उसे आपने समाप्त करने का प्रयास किया है। समाज में आर्थिक हैसियत के मुताबिक ही सबको मनोरंजन के साधन उपलब्ध होते हैं। गरीब की स्त्री के साथ कोई भी मज़ाक, चुहल कर सकता है। दुनिया के किसी भी मुल्क में इतना मुफ़्त मनोरंजन अभी तक लोगों को नसीब नहीं हुआ है। इस नजरिए से कहना पड़ेगा कि भारत विश्व का सबसे ज़्यादा विकसित राष्ट्र है। इसलिए हरिशंकर परसाई लिखते हैं, ''मगर गरीब की लुगाई, कहावत के मुताबिक, सबकी भौजाई होती है, उसे कोई भी बेखटके छेड़ लेता है, कोई भी उससे चुहल कर लेता है।''[2] भारतीय संदर्भ में जहाँ विवाह एक पवित्र, धार्मिक और सांस्कृतिक अनुबंध है, वहीं आधुनिक युग में उसका स्वरूप दिन–प्रतिदिन बदलता जा रहा है। समाजशास्त्रियों ने माना है कि पति और पत्नी में आर्थिक, सामाजिक और सांस्कृतिक दृष्टि से जितनी अधिक समता होगी, विवाह उतना ही अधिक सफल होगा। पौर्वात्य और पाश्चात्य विद्वानों ने इस सांस्कृतिक धरातल की माँग के औचित्य को स्वीकार करते हुए विवाह साफल्य को मूल रूप से इसी तथ्य पर निर्भर भी बताया है। इस पुरुषवादी समाज ने निरन्तर नारी की अस्मिता के साथ खिलवाड़ ही नहीं किया है बल्कि उसके विकास के समस्त अवरुद्ध रखे रहा। नारी मात्र पुरुष के दया की पात्र बन गयी थी। आज की नारी टूटे एवं लचर सम्बंधों को बनाये रखने हेतु विवश नहीं है। परिवर्तित मूल्यों के सम्बंध में आज विवाह एक अटूट बंधन नहीं माना जाता। आज ''आर्थिक निर्भरता के कारण नारी मात्र आश्रय के लिए पति से सम्बंध बनाये रखने के लिए तैयार नहीं है, न ही पुरुष की उपेक्षा सहने को तैयार है।''[3]

विश्लेषण –

हरिशंकर परसाई का व्यक्तित्व जितना आकर्षक एवं प्रभावकारी है उतना ही उनका व्यंग्य लेखन भी। उन्होंने अपना लेखकीय जीवन जबलपुर से प्रकाशित साप्ताहिक पत्रिका 'प्रहरी' में 'उदार' नाम से प्रारम्भ किया। बाद में परसाई जी हिन्दी पत्र–पत्रिकाओं के स्थायी स्तम्भ और कुछ स्वतंत्र स्तम्भ के रूप में लिखने लगे। उन्होंने गुण और परिणाम दोनों ही दृष्टि से एक जनवादी कथाकार के दायित्व की पूर्ति की है। व्यंग्य साहित्य ने आज हिन्दी में एक विशिष्ट विधा के रूप में जो ख्याति अर्जित की है, इसका अधिकांश श्रेय परसाई की रचनाओं को जाता है। व्यंग्य–रचना उनके लिए मात्र हास्य–जनक विषय वस्तु नहीं है, वह विद्रूप का उद्घाटन, पर्दाफाश, करारी चोट, गहरी मार या सिर्फ झकझोर देने की प्रक्रिया का एक लम्बा सिलसिला ही नहीं है, यह तो गहरी और व्यापक सामाजिक, राजनैतिक अर्थसंकेतों की सम्प्रेषक सर्जनात्मक प्रक्रिया का एक अंग है। आधुनिक व्यंग्य साहित्य को कथ्य एवं शिल्प की दृष्टि से अत्यन्त सुदृढ़ बनाया है।

विषय–वस्तु की व्यापकता और विविधता की दृष्टि से हरिशंकर परसाई की व्यंग्य रचनाओं का एक विराट् संसार है। मानव, समाज और प्रकृति से संबंधित शायद ही कोई ऐसा विषय हो जिस पर उनका ध्यान नहीं गया। धर्म, दर्शन, राजनीति सम्बन्धी सभी समस्याओं पर उनका ध्यान गया है। धर्मान्धता, मतान्धता, विचारान्धता, छद्म कर्मशीलता, झूठे प्रकृति प्रेम, छद्म बुद्धिजीविता की उन्होंने कड़ी और निर्मम आलोचना की है। सुविधाभोगी थैलीशाहों, जमाखोरों, भ्रष्ट और अवसरवादी राजनैतिक नेताओं, जनजीवन से कटे भ्रष्ट प्रोफेसरों, नयी नस्ल के राजनैतिक कार्यकर्ताओं, देशद्रोहियों, समाजविरोधी तत्वों और प्रतिक्रियावादियों की भी उन्होंने आलोचना की है। देशकाल और समाज का कोई ऐसा क्षेत्र नहीं बचा जिसकी विसंगतियों और विडम्बनाओं का चित्रण आपने नहीं किया हो। मनोवृत्तियों की तह में जमें हुए हर तरह के पाखण्ड को आपने अपनी कलम से कुरेदा है। किसी व्यंग्य–रचना में आलोचना का केन्द्र व्यक्ति है तो किसी में मोहल्ला, किसी में नगर तो किसी में पूरा देश। रचना–सामग्री का इतना व्यापक आयाम शायद ही किसी समकालीन कथाकार ने संजोया हो। कहीं–कहीं तो एक ही व्यंग्य कथा के अन्तर्गत व्यापक से व्यापकतर उड़ाने भरती हुई उनकी प्रतिभा

आश्चर्यचकित कर देती है। लेखक पेट के दर्द से बात शुरू करते हैं और देश के दर्द तक पहुँच जाते हैं। अंत तक संवाद का सिलसिला नहीं टूटता और तर्क की संगति भी बनी रहती है। परसाई जी के लेखन की यह शैली प्रशंसनीय है।

व्यंग्यकार हरिशंकर परसाई 'दो नाक वाले लोग' नामक रचना में विवाह–आडम्बर में मितव्ययिता को नाक कटना, कहने वालों पर प्रहार करते हैं। किसी विवशता या स्वेच्छा से अन्तर्जातीय विवाह रचाने वाले भी शादी की टीम–टाम और धूमधाम से बाज़ नहीं आते–वे लिखते हैं, ''मैं उन बुजुर्ग को समझा रहा था कि आपके पास रुपये हैं, नहीं, आप कर्जा लेकर शादी का ठाठ बनायेंग? पर कर्जा चुकायेंगे कहाँ से? जब आपने इतना नया कदम उठाया है कि अन्तर्जातीय विवाह कर रहे हैं, तो विवाह भी नए ढंग से कीजिए।'' वे कहने लगे, ''नहीं जी, रिश्तेदारों में नाक कट जायेगी।''[4]

'प्रेम की बिरादरी' में हरिशंकर परसाई लिखते हैं, ''वे हमेशा दूसरों को अपवित्रता का पानी लोटे में लिए रहते हैं। मिलते ही पवित्रता का मुँह धोकर, उसे उजला कर लेते हैं। वे पिछले दिनों दो लड़कियों के भागने, तीन स्त्रियों के गर्भपात, चार की गैर बिरादरी शादी और दो पतिव्रताओं के प्रणय–प्रसंग बता चुके हैं।''[5] सरकारी जांच आयोग द्वारा अपनी रिपोर्ट के लिए समय को लम्बा खींचा जाता है। इस विसंगति को परसाई जी, पैरोडी द्वारा इस प्रकार व्यक्त करते हैं– ''भाई, तेरे दुःख से मेरा हृदय द्रवित हो गया है। मैं तेरी रोटी की समस्या पर आज की एक उप–समिति बिठाता हूँ, पर तुझसे मेरी प्रार्थना है कि रिपोर्ट प्रकाशित होने से पहले मत मरना।''[6]

हरिशंकर परसाई ने समाज, व्यक्ति और उसके प्रत्येक पक्ष के क्रियाकलापों पर पैनी नज़र रखी है। समाज और धर्म के क्षेत्र में आई विकृतियों को देखा–परखा और उन पर व्यंग्य किए हैं। व्यंग्यकार के लिए न कोई विषय अस्पृश्य रहा और न ही उपेक्षणीय। रूढ़ियों एवं कुप्रभावों से जुड़ा भारतीय न जाने कितनी त्रासदी भुगतान सामाजिक कर्मकांड उसे दुःखी करते हैं किन्तु फिर भी वह इन्हें दूर करने के लिये विवश हैं क्योंकि रूढ़ियाँ इनसे चिपकी हुई है। इन्होंने रूढ़ियों को सीने से चिपका रखा ह। कितनी विडंबना है। इस वैज्ञानिक युग में भी आम भारतीय रूढ़ियों–अंधविश्वासों को सीने से चिपकाये बैठा है।

हरिशंकर परसाई ने यथार्थवादी रहकर भी सामाजिक कुरीतियों को और विसंगतियों को हमारे सामने उद्धृत किया है। उन्होंने यह भी बताया कि समकालीन करीतियाँ जनसामान्य के लिये काफी नुकसानदायक है और वह इसके लिये स्पष्ट मत रखते हैं।

हरिशंकर परसाई का यथार्थवाद बहुत ही पुष्ट और स्पष्ट है, समाज सदैव ही अपनी विचारधारा को अन्य लोगों में बाँटता है। आधुनिक लेखक अपनी कथाओं में इस प्रकार का लेखन नहीं करते वे मात्र दृष्टिभ्रम की बात करते है। परसाई जी ने अपने साहित्य में अकर्मण्यता को कोई स्थान नहीं दिया है।

निष्कर्ष –

निष्कर्षतः हरिशंकर परसाई जी का रचना संसार समाजवादी चित्रण से भी भरपूर रहा है, वे समाज के चिंतक और आर्थिक दशाओं के ज्ञाता रहे हैं। उनका कल्पना संसार सदैव ही विसंगतियों और सामाजिक कुरीतियों के साथ जुड़ा रहा, वे लगातर विसंगतियों को दूर करने और इसके निदान के लिये ही प्रयत्नशील रहे हैं।

संदर्भ –

[1] फैमिली प्लानिंग, परसाई रचनावली, खण्ड 2, पृष्ठ 65

[2] हरिशंकर परसाई – राम की लुगाई और गरीब की लुगाई, पृष्ठ 32

[3] डॉ. प्रभा वर्मा – हिन्दी उपन्यास : सामाजिक परिवर्तन की प्रक्रिया और स्वरूप, पृष्ठ 236

[4] हरिशंकर परसाई – 'दो नाक वाले लोग', पृष्ठ 126

[5] हरिशंकर परसाई – प्रेम की बिरादरी, पृष्ठ 92

[6] हरिशंकर परसाई – अपनी–अपनी बीमारी, पृष्ठ 30